IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

महात्मा गाँधी और समाज सुधार–एक विश्लेष्ण

डॉ0 अजीत कुमार पाण्डेय
असिस्टेंट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग
यशोदानन्दन हरिवंश महाविद्यालय
तारनपुर, सण्डवा चण्डिका, प्रतापगढ़ उ0प्र0

उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दी के लगभग सभी भारतीय चितकों एवं महापुरुषों का चिन्तन जीवन के सभी क्षेत्रों से सम्बद्ध रहा है। भारत की राजनीतिक पराधीनता के फलस्वरुप देश के धार्मिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने के कारण, स्वत्रतत्रंता आन्दोलन छिड़ने के साथ ही देश के सामाजिक तथा आर्थिक जीवन में भी सुधार की आवश्यकता अनुभव की गयी, केवल राजनैतिक स्वतत्रंता का कोई महत्व नही था। गाँधी जी से पूर्व राजाराम मोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, लोकमान्य तिलक आदि अनेक समाजिक सुधारक अवतरित हो चुके थे। रामराम मोहन राय द्वारा बोई गयी भारतीय पुर्नजागरण की बीज जिसे पनपाने में स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द आदि ने योगदान दिया था, जो गाँधी जी के प्रयत्नों से परिपक्व हुई। राजाराम मोहनराय ने नारी उद्धार एवं शिक्षा का उत्थान आरम्भ किया। स्वामी दयानन्द ने अस्पृश्यता, शूद्र व नारी शिक्षा, स्व की भावना तथा धार्मिक अन्धविश्वासों एवं रुढ़ियों के त्याग तथा मंत्र तथा वैदिक सभ्यता की रक्षा का आह्वान किया। स्वामी विवेकानन्द ने भारतीय आध्यात्मिकता की रक्षा, पाश्चात्य भौतिक सभ्यता के अनुकरण न करने का परामर्श और सर्वधर्म समन्वय, विश्व–बन्धुत्व एवं सेवा का उपदेश, तथा भारत में सर्व प्रथम प्रबल स्वाभिमान की भावना उत्पन्न की। सुधारकों ने बाल–विवाह, बहु–विवाह, कन्या–वध, सती–प्रथा आदि को आगे बढ़ाया। स्त्रियों व शूद्रों के उत्थान के मार्ग की बाधाओं अन्धविश्वासों एवं प्रचलित रुढ़ियों के विरुद्ध उन्होंने जोरदार आन्दोलन छेड़ा। महात्मा गाँधी के जीवन, चितंन, शिक्षाओं एवं कार्यों में भारतीय पुनर्जागरण अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुआ। गाँधी के अभ्युदय से राजनैतिक और सामाजिक परिदृश्य बदल गया। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त अभिजन के दृष्टि में अंहिसा, औद्योगीकरण, शिक्षा, यौन और विवाह सम्बन्धी उनके विचार असंगत और पुराने ढर्रे के प्रतीत होते थे। किन्तु उनके निधन के लम्बे समय के बाद वे अद्‌भुत रुप से आधुनिक प्रतीत होने लगे है। अल्प विकसित विश्व की सामाजिक–आर्थिक समस्याओं के सर्वेक्षण के दौरान गुन्नार मिर्डाल ने गॉधी जी को समस्त व्यवहारिक क्षेत्रों में एक प्रबुद्ध उदारवादी घोषित किया।

1915 के बाद भारतीय इतिहास मे गाँधी युग का सूत्रपात हुआ। अब भारतीय राष्ट्रवाद तूफानी दौर से गुजरने लगा, किन्तु गाँधी जी की सर्वब्यापी अर्न्तदृष्टि ने राष्ट्रीय जीवन में समाज सुधार के महत्व को कभी ओझल नहीं होने दिया और पहले जो अल्पसंख्यकों तक सीमित था। उनके नेतृत्व ने अब सम्पूर्ण राष्ट्र को आवृत्त कर लिया। गाँधी जी ने केवल राजनैतिक व आर्थिक स्वराज का ही नहीं अपितु सांस्कृतिक स्वराज का भी समर्थन किया। महात्मा गाँधी ने राजनैतिक तथा सामाजिक दोनों गतिविधियों को एकीकृत किया और देश को स्वतत्रंता दिलायी। भारतीय राष्ट्रवाद का कोई चरण सामाजिक दृष्टि से प्रतिक्रियावादी नही था। यह सत्य है कि समाज सुधार के प्रत्येक चरण में विभिन्न मार्गो एवं आदर्शों का अनुगमन किया। उदारवादी चरण पश्चिम से अतिशय प्रभावित था, जिस प्रकार उदारवादी राष्ट्रवाद था, उग्रवादी या पुनुरुत्थानवादी या राष्ट्रवादी चरण, नवीन चेतना के अनुरुप अत्यन्त स्वतंत्र एवं राष्ट्रीय था, और गाँधीय चरण, गाँधीय राष्ट्रवाद के ही समान उपर्युक्त दोनों का संश्लेषण था। उदारवादी राष्ट्रवाद उस नवीन चेतना को संतुष्ट न कर सका, जो उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में राष्ट्र मे व्याप्त हुई। उग्रवादी राष्ट्रवाद अत्यधिक राजनीतिक होने के कारण समाज–सुधार कों समान महत्व प्रदान न कर सका। किन्तु गाँधीय राष्ट्रवाद ने राजनीति के साथ समाज–सुधार को भी मिलाया और आचारशास्त्रीय (नैतिक–एथिकल) धर्म को, सामाजिक व राजनैतिक प्रगति का आधार बनाया। भारत जैसे देशों में यह संश्लेषण अत्यन्त प्रभावी सिद्ध हुआ।

गाँधी रुढ़िवादी (अनुदार) भी थे और क्रान्तिकारी भी, राष्ट्रवादी भी थे और अर्न्तराष्ट्रीय भी, आस्थावान भी थे और उत्कृष्ट व्यक्तिवादी भी, इन सब के साथ ही एक सच्चे समाजवादी थे। समाजसुधार के सन्दर्भ में भी उनके विचार अत्यन्त प्रगतिशील भी

जो कि पश्चिम के सर्वाधिक उत्कृष्ट समाज–सुधारक को भी मीलों पीछे छोड़ देते। किन्तु इसके साथ ही वे अपने देश के विगत परम्पराओं से विच्छेद के लिए भी तैयार नही थे, और जनसमुदाय को साथ लेकर चलने के पक्ष में थे, वे जनता की भाषा में बोलते थे ताकि वह उन्हें समझ सकें, उनका अनुगमन कर सकें। यही कारण है कि गाँधीय बाढ़ में युगों का कूड़ा–करकट बह गया।[1]

गाँधीजी ने जातिवाद या नश्लवाद, साम्राज्यवाद, सम्प्रदायिकता तथा अस्पृश्यता के विरुद्ध संघर्ष छेड़ने के साथ ही भारत में उन्होंने सामाजिक अन्याय, अत्याचार तथा उत्पीड़न का घोर विरोध किया। उनके मतानुसार यह संम्भव नही है कि कोई व्यक्ति सक्रिय रुप से अहिंसक हो या फिर भी सामाजिक अन्यायों के विरुद्ध विद्रोह न करें। उन्होने भारत के दलित निम्न वर्गों की मुक्ति के लिए जो संघर्ष छेड़ा उससे स्पष्ट है कि सामाजिक न्याय के आदर्श के साथ उनका घनिष्ठ लगाव था।

एक समाज–सुधारक तथा शिक्षाशास्त्री और अर्थशास्त्री के रुप में भी उन्होंने महान विचार ब्यक्त किये। कोई माने हुए धार्मिक नेता अथवा एक महान समाज–सुधारक नहीं होते हुए भी हिन्दू धर्म के पुनरुत्थान एवं सामाजिक सुधार में उनका योगदान उल्लेखनीय है।

वे वर्णव्यवस्था को भारतीय हिन्दू समाज के लिए अत्यन्त आवश्यक मानते थे। उनके अनुसार वर्णव्यवस्था का अर्थ है अपने पूर्वजों से ग्रहण किये हुए व्यवसाय (पेशे) को अपनाना। उनका कहना था कि हिन्दू धर्म के अपने ज्ञान के आधार पर मै कह सकता हूँ कि वर्ण व्यवस्था का सीधा–सादा अर्थ यह है कि हम सब अपने–अपने पूर्वजों का परम्परागत व्यवसाय केवल जीविका के लिए ही अपनायें अगर वह पैतृक व्यवसाय मूल नैतिक धर्म से असंगत न हो। वर्णाश्रम धर्म यह पाबंदी लगाता है कि वह जीवित रहने के लिए सिर्फ अपने बाप–दादों का व्यवसाय ही करें। यही वर्णाश्रम धर्म है– न कम, न ज्यादा। अगर हम सब इस वर्ण धर्म का पालन करें तो हमारी भौतिक महत्वाकांक्षाएँ मर्यादित हो जायेंगी और हमारी शक्ति उन विशाल क्षेत्रों की खोज के लिए मुक्त हो जायेगी जिनसे और जिनके द्वारा हमें ईश्वर का ज्ञान प्राप्त हो सकता है।[2]

वर्ण व्यवस्था एकदम अलग–थलग रखने की विभाजन व्यवस्था नहीं है।[3] परन्तु वर्णव्यवस्था के आधार पर ऊँच–नीच का भेदभाव की घारणा का उन्होंने कट्टर विरोध किया। वे वर्णगत कार्य–विभाजन का ऊँच–नीच की भावना से कोई सम्बन्ध नहीं मानते थे। गाँधी जी प्रत्येक कार्य को अपने–अपने स्थान पर बराबरी का महत्व देते थे, अतः किसी को उच्च तथा अन्य को निम्न मानने की धारणा उनकी दृष्टि में सामाजिक अन्याय था।

उन्होंने समाज के चार मुख्य वर्णों–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र को प्राचीन वर्णव्यवस्था के अनुरुप माना। उनका कहना था कि वर्णाश्रम धर्म इस पृथ्वी पर मनुष्य जीवन के उद्देश्यों की व्याख्या करता है। इसका उद्देश्य दिन प्रतिदिन धन बटोरना और आजीविका के भिन्न–भिन्न साधन खोजना नहीं है मनुष्य का जन्म इस लिए हुआ है कि वह अपने प्रभु को जानने के लिए अपनी शक्ति का एक–एक कण काम में लें।

वे यह भी मानते थे कि वर्णव्यवस्था में प्रत्येक वर्ण का समान स्थान होता है और वर्ण को परिवर्तित किया जा सकता है। जातिगत श्रेष्ठता की भावना इसमें नही है। वर्ण तो पेशे से सम्बन्धित है जबकि जाति का सम्बन्ध रक्त (जन्म) से होता है।

इस तरह जाति व्यवस्था प्राचीन भारतीय वर्ण–व्यवस्था का ही दूषित रुप है जिससे अस्पृश्यता के अभिशाप का जन्म हुआ है। अतएव गाँधी जी ने जातिप्रथा की निन्दा की। आगे चलकर गाँधी जी ने न केवल अन्तर्जातीय विवाहों का समर्थन किया वरन् अन्तर्जातीय विवाहों विशेष रुप से उच्च जातियों एवं अस्पृश्य जातियों के बीच विवाहों को प्रोत्साहित किये जाने पर जोर दिया।[4]

अस्पृश्यता को महात्मा गाँधी हिन्दू समाज का एक कलंक मानते थे जिसकी मध्ययुग में सन्तों, कवियों तथा समाज–सुधारकों ने भी तीक्ष्ण शब्दों में भर्त्सना की थी। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द आदि ने भी इसकी कछु आलोचना की। किन्तु अस्पृश्यता के विरुद्ध अभियान को उस भावनात्मक स्तर पर ले जाने में सर्वाधिक सफलता सम्भवतः गाँधी जी को मिली जिन्होंने इस प्रश्न को ले कर सम्पूर्ण हिन्दू जाति के अन्तःकरण को झकझोर डाला। अस्पृश्यता को हिन्दू धर्म का कोढ़ मानकर उन्होंने पंण्डों, पुरोहितों तथा कट्टरवादियों को चेतावनी दी कि यदि अछूतों के साथ होने वाले अन्यायों और अत्याचारों को प्रतिकार न किया गया तो हिन्दू जाति का सर्वनाश हो जायेगा। इस अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध गाँधी जी आजीवन संघर्ष करते रहे। छुआछूत को हिन्दू समाज पर एक कलंक मानने के साथ ही राष्ट्रीय एकता के मार्ग में भी

महान बाधा मानते थे। अतः उन्होंने अस्पृश्यता निवारण एवं दलित उत्थान को अपने सार्वजनिक जीवन का एक प्रमुख अंग बनाया। उन्होंने कहा अछूतों को गले लगाये बिना हम सच्चे मनुष्य नही बन सकते। हिन्दू समाज के इस अभिशाप के विषय में उन्होंने कहा कि जिस प्रकार एक रत्ती संखिया से टोलाभर दूध बिगड़ जाता है उसी प्रकार अस्पृश्यता से हिन्दू धर्म चौपट हो रहा है। अस्पृश्यता के विरुद्ध संघर्ष उनकी सम्मति में एक धार्मिक संग्राम था जो मानव सम्मान की रक्षा के लिए था। हिन्दू धर्म में प्रबल सुधार सनातनियों के खांईदार गढ़ों या दुर्गो के विरुद्ध था। गाँधी जी ने घोषणा की कि यदि अस्पृश्यता हिन्दू धर्म का अभिन्न अंग है तो मै ऐसे हिन्दू धर्म को अपनाना कतई पसंद नही करुंगा।[5]

उन्होंने कहा चाहे मै टुकड़े–टुकड़े कर दिया जाऊँ पर दलित जातियों से आत्मीयता नहीं छोडूगां। उन्होंने अछूतो के प्रति अत्याचार और छुआछूत के बर्ताव की कटु भर्त्सना करते हुए कहा कि जिस प्रथा के कारण हिन्दुओं का एक बड़ा भाग पशु से भी बदतर हालत को जा पहुँचा है उसके लिए मेरे रोम–रोम में घृणा व्याप्त हो रही है। सर्व प्रथम गाँधी जी ने ही अस्पृश्यों के लिए मन्दिरों तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों में भेदभाव न करने तथा समानता का व्यवहार करने का कार्य, केवल सिद्धान्त में नहीं बल्कि व्यवहार में भी संम्भव किया।[6]

उन्होंने अछूतों को हरिजन अथवा ईश्वर का जन कहा है। इस वर्ग के सदस्यों को पिछड़ेपन से उपर उठाने के निमित्त उन्होंने अनेक प्रकार की विशेष सुविधाएँ तथा संरक्षण प्रदान करने के लिए जोरदार अभियान छेड़ा। अछूतोद्धार उनके सक्रिय जीवन का एक अभिन्न अंग था। उन्होंने कहा कि यदि अछूत हिन्दू धर्म के ही अंग है तो फिर उन लोगों को मन्दिरों में प्रवेश न करने देना, धर्मग्रथों का अध्ययन करने से रोकना अथवा नियमानुसार पूजा–पाठ से रोकना, घोर अन्याय है। गाँधी जी के प्रयत्नों से हरिजन सेवक संघ की स्थापना हुई। जिसके द्वारा गाँधी जी ने दलितों की भौतिक उन्नति हेतु भी प्रयास किया उनके दो प्रसिद्ध समाचार पत्रों के नाम हरिजन तथा हरिजन सेवक था। उन्होंने सह घोषणा की थी कि अस्पृश्यता निवारण के बिना स्वराज्य नही मिल सकता। अस्पृश्यता को उन्होंने कृत्रिम कहा और बताया कि अस्पृश्यता का मौलिक उद्‌भव धर्म में कहीं नहीं है। अस्पृश्यता दैवी नहीं वरन् मानवकृत है। यह न पूर्वकर्म का फल है न ईश्वरकृत है। अस्पृश्यता निवारण हेतु उन्होंने समय–समय पर महत्वपूर्ण सुझाव भी रखे। उन्होंने हिन्दुओं को परामर्श दिया कि हरिजन बालकों को गोद लें। उन्होंने स्वयं भी ऐसा किया। हरिजनों को सलाह दी कि वे मांस–भक्षण न करें, मद्यपान न करें, जुऑ न खेलें, और दूसरे की छोड़ी हुई जूठन स्वीकार न करें। अस्पृश्यों के प्रति उनका अगाध स्नेह इस उदाहरण से प्रकट होता है कि–मै फिर से जन्म नहीं लेना चाहता, लेकिन फिर भी मुझे जन्म लेना ही पड़े तो मै एक अछूत के रुप में जन्म लेना चाहूँगा ताकि मै उनके क्लेशों, कष्टों तथा अपमानों में भाग ले सकूँ और इन दयनीय परिस्थितियों से स्वयं अपने को उबार सकूँ। अतः मेरी प्रार्थना है कि यदि फिर से जन्म लेना पड़े तो मुझे ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य अथवा शूद्र के रुप में नहीं प्रत्युत अति शूद्र के रुप में जन्म मिले। अम्बेडकर का यह विचार था कि हिन्दू समाज के अर्न्तगत रहते हुए दलितों के उद्धार की कोई आशा नहीं है और इसी कारण वे इनके हिन्दू धर्म एवं समाज से सम्बन्ध विच्छेद के पक्ष में थे। गाँधी जी इसके विपरीत दलितों की समस्या का समाधान समाज के भीतर से चाहते थे एवं अलगाववादी प्रवत्ति के विरुद्ध थे। पूना पैक्ट के माध्यम

से हिन्दू समाज में पड़ने वाली दरार को उन्होंने बंद करने में सफलता प्राप्त की। अस्पृश्यता उन्मूलन के लक्ष्य की प्राप्ति वे हृदय परिवर्तन के माध्यम से चाहते थे। उन्होंने कहा यदि अस्पृश्यता की गंदगी को दूर नही किया गया तो यह गंदगी हिन्दू समाज को निगल जायेगी। इसे मिटाने के लिए असंख्य हिन्दुओं का हृदय परिवर्तन आवश्यक है। अस्तु यह निःसन्देह कहा जा सकता है कि आधुनिक भारत से अस्पृश्यता के लगभग निवारण में गाँधी जी की प्रेरणा ही सर्वोपरि रही है।

सन्दर्भ सूची :–

1. शैलेन्द्र पांथरी और अमरेन्द्र प्रताप सिंह, आधुनिक भारत का सामाजिक इतिहास वाराणसी, 2000, पृष्ठ 222।
2. हरिजन, 28 सितम्बर 1934 पृष्ठ 260।
3. यंग इण्डिया 17 जुलाई 1924 पृष्ठ 41।
4. डॉ0 रामगोपाल सिंह, सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष 1994 पृष्ठ 119।
5. एम0 के0 गाँधी, समाज सुधार, समस्या और समाधान पृष्ठ 581।
6. अमरेन्द्र प्रताप सिंह, सोशियो इकोनॉमिक एनालिसिस ऑफ दि कांग्रेस मूवमेंट, 1917 पृष्ठ 201।